Journal of Advance Research in Science and Social Science (JARSSC) **ISSN:** 2582-2004

Volume 01, Issue 01 (2018)

स्त्री चिंतन की परम्परा और हिंदी कविता

रुमा ज़ैदी

शोध छात्रा, हिंदी विभाग, सनराइज विश्वविद्यालय, राजस्थान

जीवन चिंतन और साहित्य मानव समाज की एक सतत प्रगतिशील परम्परा है। प्रत्येक समाज जिस प्रकार अपने अनेक संस्थान बनाता है। उसके केन्द्र में होता है, मनुष्य। मानव को केन्द्र में रखकर सभी प्रकार की सभ्यतायें एवं संस्कृतिया विकसित होती है और आगे बढ़ती चलती है। अतएव सभ्यता एवं संस्कृति के आधार पर मानव समाज की एक प्रगतिशील परम्परा निर्मित होती चलती है।

इस परम्परा में सबसे प्रमुख व संवेदना संम्पृक्त विषय वस्तु है साहित्य एवं कला।

दुनिया के किसी भी समाज में उसकी प्रगति व उसके वैकासिक स्थिति को परखने के लिए सबसे आसान तरीके होते है उसके साहित्य एवं कलाओं का अवलोकन। उस साहित्य में जो सबसे महत्वपूर्ण होता है वो है स्त्री समाज को लक्षित कर लिखा गया साहित्य। समाज में किसी भी वंचित तबके के बारे में जानने के लिए आसान तरीका साहित्य ही होता है। स्त्री जीवन की सबसे सच्ची तस्वीर साहित्य के माध्यम से ही सामने आती है। साहित्य में दर्ज जीवन और समाज की संवेदनाओं में मानव सभ्यता की आधी दुनिया का सहज अवलोकन किया जा सकता है। इसमें वह समाज सामने आता है। जो पूरी दुनिया को सम्पूर्णता प्रदान करता है। ये वह साहित्य है जो स्त्री जीवन और उसके समाज को लक्षितकर लिखा गया है।

भारतीय साहित्य में स्त्री जीवन को आधार बनाकर अनेक प्रकार के साहित्य लिखे गये है और लिखे भी जा रहे है। हिन्दी साहित्य में ऐसे साहित्य की परम्परा काफी विस्तृत है। कहानियाँ, उपन्यासों व स्त्री आत्म कथाओं के माध्यम से इसको और अधिक विस्तार मिला है। इस साहित्य के अलावा जिससे स्त्री चिंतन को रेखांकित किया गया है उसमें हिन्दी कविता का अद्वितीय स्थान है विमर्श की बात करें तो इसकी शुरुआत हिन्दी साहित्य में बहुत पहले से दिखाई पड़ती है। महत्वपूर्ण बात यह है कि स्त्री - की चेतना सबसे पहले कविता के माध्यम से भी व्यक्त होती। यह आदिकाल, मध्यकाल में दिखाई पड़ती है। 'स्त्री सशक्तिकरण के जो प्रश्न समाज में प्रकट हो रहे है, साहित्य उनसे निरपेक्ष नहीं रह सकता। हर काल में स्त्रियों केन्द्रीकरण के प्रश्न बदले है। आज स्त्रिओं लिंगभेद, महिलाओं पर हिंसा को रोकना, निजी माननों में संशोधन, महिला स्वास्थ्य, आर्थिक दर आदि में मुद्दों से जूझ रही

Received: 02.10.2018 **Accepted:** 15.10.2018 **Published**: 31.10.2018

है, स्त्रियों की समाज की आमगानी घात में जोड़ने में महिला आंदोलन ने प्रमुख भूमिका निभाई है। आज साहित्य में भी महिलाओं के आंदोलनों द्वारा उठायें गयें मुद्दे प्रमुखता से उभर रहे है। यह एक अच्छी- खबर है।1 (क्षमा शर्मा- स्वींवादी विमर्ष: समाज और साहित्य, एन समाज प्रषासन नई दिल्ली .2012) इन्हीं मुद्दों को लेकर आज हिन्दी साहित्य में प्रश्न किये जा रहे हैं। उत्तर की तलाश की जा रही है। जो बिन्दु हमेशा से मानव जीवन में स्त्री जीवन को प्रभावित करते है, उनकी अभिव्यक्तियाँ सर्वप्रथम लोकगीतो के माध्यम से आमन्जनमानस में सुनाई पड़ती है।-

"लोकगीतों के आये शोधकर्ता- श्री रामनरेश्वर त्रिपाठी ने गहनता से अध्ययन करके यह निष्कार्ष निकला है,कि स्त्रियों के गीतों में पुरूषों का मिलाया हुआ एक -शब्द भी नहीं है। स्त्री गीतों की सारी पविन्तयाँ के ही हिस्से की है। यह संभव हो सकता है कि एक-एक गीत की रचनाओं में सौ वर्ष एंव सैकड़ों मस्तिष्क लगे हों पर मस्तिष्क है स्त्रियों के ही यह- निर्विवाद है।" 2 (राजेन्द्र यादव,अतीत -होती सदी और स्त्री का भविष्य राजकमल प्रभाकर ,नई दिल्ली 2011)

स्त्री जीवन की जो अभिव्यक्तियाँ स्त्रीयों के माध्यम से व्यक्त हुई है, को अधिक सत्य और सारगर्भिक है। सभी बाते स्त्री जीवन की सहज सच्चाई है, जिसे उन्होंने बड़े की समीप और सटीक ढंग से व्यक्त किया है। आर्थिक रचनाओं लोकगीताओं सभ्यताएँ हुई है वह आगे चलकर और गर्भस्पर्शी और हृदयभेदी वन पड़ती है। जीवन व चिंतन की बातें धीरे-2 आत्यधिक तर्कसंगत व व्यापक बनती है। " आज हमारी परिस्थिति कुछ और भी है। स्त्री न घर का अलंकार बनकर रहना चाहती है और न ही देवी की मूर्ति बनकर प्राण- प्रतिष्टा चाहती है" ।3 (महादेवी वर्मा, श्रृखला की गडियाँ, लोकभारती प्रकाषन, नई दिल्ली 2012) नारी वादी साहित्य व विमर्श का सबसे प्रमुख बड़ा मुद्दा रहा है। पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था। इसमंे बाद में सामंतवाद, ब्राह्याणवाद, वर्चस्ववाद, पूंजीवाद, कलावाद आदि, अधिक जटिल प्रश्न जुड़ते चले जाते है। समाज व व्यवस्था से जुड़े इन्ही विविध पहलुओं के परिप्रेक्ष्य में स्त्री विमर्श की धारा आगे बढ़ती है!

हिन्दुस्तानी सांस्कृतिक परम्परा में स्त्री बहुत ऊँचा स्थान दिया गया है, यह बात प्रत्येक समाज के लोग कहते आये है। लेकिन धरातल पर खास कर साहित्य में इसे सामाने - जलवा ही समझा गया । हिन्दी साहित्य के आरंभिक दौर में मसलन आदिकाल में उस स्त्री को वस्तु ही समझा गया और उसे जीतने और हारन का भी विषय बनाकर देखा गया! आदिकालीन अनेक ग्रन्थ मूलतः रासो काव्यों में ऐसी ही छवि अंकित की गयी है।-

"जा घर विटिया सुन्दरि देखी,

Received: 02.10.2018 Accepted: 15.10.2018 Published: 31.10.2018

ता घर धरैं वेग- तरवारि।

इसके बाद मध्यकाल में स्वचेता भावना जरूर सामने आती है। लेकिन वह बहुत ही अल्प ही रहती है। उस दौर के मुख्यतः भक्तिकालीन पुरूष कवियों ने जरूर कुछ बातें कहीं और स्त्रीमन के अनुरूप ही अपनी बातें रखने की कोशिश की लेकिन वे चाहे कबीर हों या जायसी, सूर हो या तुलसी , उस स्त्री की सामाजिक व निज वेदना को ठीक ढ़ंरग से रेखांकित नहीं कर पाये। इस दौर मे मीरा आंदाल जैसी कवयित्रियों ने अपनी बातें पितृसत्तात्मक व सामंती परिवेश को रेखांकित करने की पूरी कोशिश की और निज- वेदना को अपनी पूरी संवेदना व निष्ठा के साथ व्यक्त भी किया इस के बाद रीतिकाल में तो स्त्री के संबन्ध में जो कुछ कहा गया वह बाहरी बात थी। यह रूपवादी बात स्त्री के तन को संवोधित करती थी लेकिन उसकी चेतना व वेदना को नहीं। उसके मांसिक - सौदर्य से कहीं अधिक उसके शारिरिक -श्रंगार की चर्चा खूब हुई। इस दौर में स्त्री को श्रंृगार व उपयोगी निगाह से देखा गया संवेदना की समाजिक धरातल से नहीं। वे चाहे देव हों या पद्माकर ,मतिराम हों या घनानन्द या फिर चाहे वे विहारी हों या भूषण , सभी ने तन पर ही नजर रखी मन पर नहीं। चेहरा देखा, आत्मा नहीं। उनकी आँखों की कालिमा में ही खो गये उसके आँखों की लालिमा नहीं देखी, उसकी भ्रुकुटी की वक्रता और कटि के कसाव व जुल्फों के घुमाव में घूम गये उसके धड़कते हृदय के स्पंदन और संवेदना को नहीं छू पाये। आगे चलकर भारतीय समाज और व्यवस्था तमाम प्रकार के सामाजिक ,सांस्कृतिक व धार्मिक परिवर्तन के चलते काफी बदलाव की ओर बढ़े। स्त्री जीवन को और अधिक संवेदनाशील तरीके से रेखांकित करने की परम्परा आगे बढ़ी।

समूचे भारतीय साहित्य के साथ हिन्दी साहित्य में भी एक महत्वपूर्ण परिवर्तन का सिलसिला आरम्भ होता है। वह होता है नवजागरण का काल। इस दौरान साहित्य में अनेक प्रकार की चिंतन पद्धति की शुरूआत होती है। अनेक प्रकार के विमर्श बोधी चर्चाएं आरम्भ होती हैं। साहित्य में स्त्री चिंतन की एक तस्वीर उभर कर सामने आने लगती है। यह चिंतन साहित्य में जिस विधा में दर्ज होता है वह कविता । इसी कविता में ही स्त्रियों की संवेदनात्मक अभिव्यक्तियाँ सामने आती है।

भारतेन्दु युग और द्विवेदी युग में स्त्रियों की सामाजिक सांस्कृतिक परिस्थिति और शैक्षिक दशा को लेकर रचनायें सामने आती हैं। इस काल में स्त्रियों की स्वाधीनता के प्रश्न प्रमुखता से उठाये जाने लगे। लेकिन ये सभी आवाजे पूरी तरह से उन्मुक्त नहीं थीं। ये बाते बेहद मर्यादित व सीमावद्ध तरीक से ही सामने आ रहीं थीं। मुक्ति की आकांक्षा उस तरीके से तो मुखरित नहीं हुई लेकिन उसकी सामाजिक -शैक्षिक स्थिति का अंकन अवश्य होता है। यह ध्यान देने वाली बात है कि भक्तिकाल की इक्का- दुक्का महिला रचनाकारों को छोड़ दें तो

Received: 02.10.2018 Accepted: 15.10.2018 Published: 31.10.2018

इतने लम्बे अंतराल व कालखण्ड में कोई स्त्री -लेखिका सामने नहीं आती, आदिकाल से लेकर द्विवेदी युग तक।

बीसवीं सदी के आरम्भ होने के वाद सुभद्रा कुमारी चौहान और छायावादी कवयित्री महादेवी वर्मा का नाम सामने आता है। भारतेन्दु युग से लेकर छायावाद युग तक स्त्री चिंतन की परम्परा में कोई बड़ा परिवर्तन नहीं दिखाई पड़ता। हाँ एक परिवर्तन अवश्य आता है वह है शिल्प का। अनुभूति के स्तर पर कोई बड़ा बदलाव नहीं दिखाई पड़ता। इसी दौर में नारी को 'अबला' 'श्रद्धा' और "दुख की वदली " के रूप में चिह्नित किया जाता है। स्त्री में माँ, बेटी पत्नी, प्रेमिका आदि तो देखा गया लेकिन स्त्री में "स्त्री" को और उस स्त्री में "इंसान" को ठीक से नहीं देखा गया।

छायावाद के उत्तरार्द्ध में प्रगतिवादी रचनाओं में स्त्रियों की संवेदनाओं को स्पर्श करने के प्रयास होते है। इस दौरान स्त्री -जीवन को नये ढंग से देखने और उसे रेखांकित करने का नजरिया देखा होता है।

स्त्री-विमर्श की मूल्यवोधी व विमर्शकारी परम्परा का ठीक ढंग से अंकन प्रगतिशील आंदोलन के समय से आरंभ होता है। स्त्रियों को पूर्वकाल में जैसे श्रृंगार व भोग की वस्तु के रूप में रेखांकित किया गया। उस बंधन को रेखांति करने का काम भी किया गया। स्त्रीमन स्वयं को देखने के नजरियें को बदलना चाहता है। धूमिल के शब्दों में-

"ओ नटखट बहिनों
सिंगारदान को छुट्टी दे दो
आइनों से कहो वह कुछ देर अपना अकेलापन घूरता रहे कंघी को झड़े हुए वालों की याद में गुनगुना दोरिवन को फेंक दो वांदिडस की अलगनी पर यह चोरी करने का वक्त नही" । 4 (धूमिल, आतिष के अनार सी वह लड़की, कल सुनना मुझे ,पृ॰-36)

हिन्दी कविता में स्त्री अन्य पद होकर बोलना आरम्भ करती है और स्वयंे से भी प्रश्न स्वयं से ही नहीं समूची सामजिक व्यवस्था से होता है।

आधुनिक समाज में और आधुनिकता के इस दौर में स्त्रियों के प्रश्न अत्यधिक गंभीर होकर सामने आते है। उसकी कविता उसी की जुवान से निकलती है तो इन बातों का सक्षम प्रमाण प्रस्तुत करती है। आज अनेक प्रकार के प्रश्न हमारे सामने हैं। उन सभी प्रश्नों व मुद्दों को संवोधित करने का कार्य कविताओं के माध्यम से हो रहा है। स्त्री विमर्श आज वहुआयामी भी हुआ है। जीवन, समाज और व्यवस्था के अनेक मोर्चों पर जहाँ स्थितियाँ जीवन व समाज अनुकूल नहीं हैं वहाँ स्त्री-लेखनी सक्रिया हो जाती है। उन सभी क्षेत्रों से कविता फूट पड़ रही हैैं। उन सभी विचार बिन्दुओं को दर्ज करने का कार्य हिन्दी कविता कर रही है। जब इस

Received: 02.10.2018 Accepted: 15.10.2018 Published: 31.10.2018

बात की घोषणा हो चुकी है कि सभी समान हैं, किसी भी प्रकार की गैरवराबरी स्वीकार्य नहीं, और हम संवैधानिक स्तर पर इसी को अंगीकृत कर चुके हैं तो इसको हमारे सामाजिक - सांस्कृतिक व व्यावहारिक धरातल पर उतारने का काम भी हमारा है। इसी की जद्दो-जिहद स्त्री लेखन की मूल अवधारणा हैं।

नारी समाज आज अनेक प्रकार से अपने स्वत्व व अस्मिता के सवालों को लेकर आपके सामने है। वह अपने संघर्ष को लेकर सचेत भी है और समाज के सामने अपने संघर्ष को लेकर खड़ी भी हैं।

"यह मेरा संघर्ष
तुमसे नहीं
अपने आप से है।
इसकी दरारों में दफनाई
मेरी देह है
इसकी पतझड़ साख पर अटकी है।
मेरी अजन्मी आत्मा।" 5 (अनामिका,अनुष्टुप, पृ॰ 70)

दुनियाँ के तमाम देशों में स्त्रीवादी विमर्श को लेकर अनेकशः चर्चाएं हुई हैं और हो भी रहीं हैं। आज दुनियाँ के अनेक देश लैंगिक -विभंेद को अपराध की श्रेणी में रखने लगे हैं। इन देशों की वैचारिकी का प्रभाव भारतीय चिंतन परम्परा पर भी पड़ा है। भारत जैसे देश में लैंगिक विभेद तो है उसमें पुरूषवादी वर्चस्व का शोषण भी मौजूद है भारतीय समाज के परिवेश में स्त्री -जीवन बहुआयामी एवं अनेक जटिलताओं से भरा रहा है। अनेक सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थाओं से मुक्ति की आकांक्षा में स्त्रियों को जड़तावादी आख्यानों से टकराना पड़ा है। इस संदर्भ में परिवार हो या समाज, संस्कृति हो या धर्म, सभी से जूझने का नाम ही स्त्री जीवन का संघर्ष है। ऐसी व्यवस्थाओं से टकराने से प्रतिरोध की संस्कृति का निर्माण होता है। यह एक सृजन का रास्ता है। हिन्दुस्तानी औरत का जीवन इस कविता से समझा जा सकता है।-

"एक लम्बा सफर तय किया औरत ने
पगलखाने तक का
लेकिन आश्चर्य ।
आखिरकार उसे श्रमदान मिल ही गया
उसने पाया कि यह भी एक घर था।
तीमारदारी ,चाकरी

Received: 02.10.2018 Accepted: 15.10.2018 Published: 31.10.2018

और हिदायतों के साथ
फर्क सिर्फ इतना था कि
यह उनका घर था ।" 6 (काव्यायनी, इस पौरूषपूर्ण समय में,पृ॰-69)

समाज में जहाँ बेटी और बेटे को देखने के लिए दो आँखें हैं वहीं उसके प्रतिकार का नजरिया भी मिलेगा अनेक प्रकार के लैंगिक विभेद सामने आते हैं। लैंगिक विभेद जो ब्राह्यणवाद में है वह मार्क्सवाद में भी है। एक भौतिक लैंगिक विभेद करता है और दूसरा भावनात्मक -लैंगिक विभेद । इस अंतर के कारण अनेक प्रकार की समस्याएँ व विषमताएँ पैदा होती हैं। इस क्रम में यह रचना द्रष्टव्य है-

"आखिर क्यों है तुम्हें
हमारे आस्तित्व से इतनी चिढ़
हमारे कोमल सपनों से इतनी नफरत
घर-वार जीने की चाह में छटपटाती
और जन्मे से पहले ही
मरने को मजबूर कर दी जाती हम हैं
तुम्हारी अजन्मी बेटियाँ।" 7 (कविता, पाती अजन्मी बेटियों की,जुलाई 2004,पृ॰27)

वास्तविक जीवन में सिद्धान्त से लेकर आचरण तक जो द्वैध परम्परा है वही असली समस्या है। नारी- जीवन की अनेक वंदीकृत छवियाँ गृहस्त - जीवन में सामने उभर कर आती है।-

"माँ थी
स्बसे बाद में खाने वाली
जिसके लिए दाल नहीं
देयकी में बची थी हलचल
चुल्लू भर पानी की
और कटोरदान में रात के चंद्रमा जैसी
रोटी की छाया थी।" 8 (चन्द्राकान्त देवताले, उजाड़ में संग्रहालय, पृ॰-77)

धीरे -धीरे परिवर्तन आते हैं। शिक्षा के बढ़ने के साथ कई बंधन टूटते हैं। लेकिन तमाम प्रकार के बंधनों के टूटने के साथ सभी विपरीत परिस्थितियों का अंत नहीं हो जाता है। इसके साथ ही अनेक प्रकार की समस्याएँ भी आती हैं।-

"एक पढ़ी - लिखी औरत
अपनी सारी पढ़ाई के बावजूद

Received: 02.10.2018 Accepted: 15.10.2018 Published: 31.10.2018

Journal of Advance Research in Science and Social Science (JARSSC) ISSN: 2582-2004
Volume 01, Issue 01 (2018)

विता देती है शेष जीवन

व्यवस्था के साये में जीते हुए आगे निकलने की जिद स्त्री जीवन की सुखद सच्चाई भी है। उसने प्रश्न कि किया और उत्तर खोजने का प्रयास थी।-

"क्या तुम जानते हो
पुरूष से भिन्न
एक स्त्री का एकांत
घर प्रेम और जाति से अलग एक स्त्री को उसकी अपनी जमीन
के बारे मे बता सकते हो तुम।" 10 (निर्मला पुतुल, अपने घर के तलावा में, क्या तुम जानते हो, पृ॰-27)

इस विचार परम्परा में हो रहे अनेक प्रकार के परिवर्तनों को समझना होगा। आज स्त्री-चिंतन की परम्परा समृद्ध और प्रौढ़ हो चली है। विमर्श से अनेक बीच पढ़ने या बहरा करने की चीज नहीं हैं, व्यापक पाठक तक पहुँचाने पर ही उसकी सार्थकता है। इसी तरह नारी वादी आंदोलन तमाम उपेक्षित, शोषित, बंधित महिलाओं तक पहुँचने पर ही सार्थक होगा और तभी शायद कृत्रिम संभ्रांतता के जाल से मुक्त होकर पहचान सकेगा कि स्त्री स्वाधीनता पर समानता,उसके अधिकार और कर्तव्य, उसकी ममता और विद्रोह को कौन सी दृष्टि और दिशा दी जानी चाहिए।" (प्रभाकर श्रोत्रिय, सौंदर्य का तात्पर्य, पृ॰-32)

इस प्रकार हम समझ सकते हैं कि स्त्री - चिंतन की परम्परा कितनी विस्तीर्ण हैं। इसी रास्ते आगे के लक्ष्यों को पूरा करते हुए आगे बढ़ा जा सकता है।

Received: 02.10.2018 Accepted: 15.10.2018 Published: 31.10.2018